18

कुछ नहीं से कुछ होने तक

एक गाँव के प्राथमिक स्कूल के पालक समूह के साथ यात्रा

उमाशंकर पेरियोडी

ब्रम्हाराकुटलू उच्चतर प्राथमिक स्कूल सभी कसौटियों पर एक औसत से निचले स्तर का स्कूल था। शिक्षा विभाग उसे पहले ही एक 'निम्न उपलब्धि वाला' स्कूल करार दे चुका था। कात्लिगे और थुम्बे गाँव के पालक इस स्थिति से परिचित थे क्योंकि जब वे अपने बच्चों को पास के हाईस्कूलों में दाखिल करवाने का दुस्साहस करते थे तो उन्हें हाईस्कूलों के शिक्षकों के अपमानजनक ताने सुनने पड़ते थे। आमतौर पर यह हल्की–फुल्की दुत्कार होती थी– जैसे, "हमारी सीटें भर गई हैं, हम और लोग नहीं ले सकते"; "हम ब्रम्हाराकुटलू स्कूल के बच्चों को भर्ती नहीं करते"; या, "हम ब्रम्हाराकुटलू स्कूल के बच्चों के पास होने की गारण्टी नहीं लेते'' आदि। यह हालत 1983 में थी जब मुझसे स्कूल सुधार समिति का सदस्य बनने के लिए कहा गया। मैंने इस भूमिका को बहुत गम्भीरता से लिया और बहुत उत्साहपूर्वक समिति में शामिल हुआ। उन शुरुआती दिनों की ओर मुड़कर देखने पर मुझे अहसास होता है कि हमारे क्षेत्र की कुछ प्रसिद्ध सुधार समितियों की तुलना में हमारी समिति बहुत हल्की थी। शिक्षकगण बैठक बुलाते थे और कुछ सहायता माँगते थे, तो हमारे अध्यक्ष, जो एक सशक्त शख्सीयत के मालिक थे, 'हाँ' या 'नहीं' कह देते थे और बात वहीं समाप्त हो जाती थी। हम सब तो बस अध्यक्ष या प्रधान शिक्षक जो भी कहते, उस पर सिर हिलाने वाले सदस्य भर थे।

फिर 1998 में हमारे गाँव के उसी स्कूल में मेरी बेटी ने दाखिला लिया। यही वह समय भी था जब स्कूल डेवलपमेन्ट एण्ड मॉनीटरिंग कमिटी (स्कूल विकास एवं निगरानी समिति – एस.डी.एम.सी.) की शुरुआत हुई और पालक समुदाय को बहुत शक्तियाँ मिलीं। एस.डी.एम.सी. के सदस्य स्कूल में पढ़ रहे बच्चों के पालकों में से ही चुने गए थे। मगर शक्तिविहीन लोग इन पदों को सम्भालने में हिचकिचा रहे थे। मैंने पाया कि इस मामले को शिक्षक भी ठीक से नहीं समझ रहे थे। इस स्थिति में मेरी पत्नी वाणी और मैंने अपने लोगों के साथ काम करना शुरू किया। हमने इस मुद्दे के बारे में बात करना प्रारम्भ किया और उन्हें समझाया कि क्यों उनका आगे आना जरूरी था। हमने उन्हें इस बात के लिए मनाया कि यह सरकारी आदेश तो था ही, उनका अधिकार भी था। समुदाय को यह विश्वास दिलाने के लिए कि एस.डी.एम.सी. में काम करना सम्भव है, और इसमें उन्हें बहुत पैसा खर्च करने की जरूरत भी नहीं है, हमने गाँव के कुछ नेताओं और युवा लोगों पर ध्यान केन्द्रित किया। बहुत लोगों को यह विश्वास हो गया और साधारण माता–पिता एस.डी.एम.सी. के लिए चुने गए। इससे परिस्थिति में स्पष्ट अन्तर आ गया। शक्तिशाली लोगों द्वारा और अधिक शक्ति एवं अधिकार हासिल कर लेने की प्रक्रिया पर साफ–साफ रोक लग गई।

मेरे मित्र इस बात से बहुत नाखुश थे कि मैं अपने बच्चों को सरकारी स्कूल में भर्ती करवाकर उन्हें गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से वंचित कर रहा था। इस बात ने मुझे परेशान किया। वाणी और मैंने इस पर चर्चा की। हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि अच्छे और बुरे स्कूल के बीच का अन्तर इस बात से तय हो जाता है कि बच्चे को अपने आसपास के संसार के साथ परिचय और जान–पहचान का कितना अवसर मिल पाता है। हम यह तो देख ही रहे थे कि अच्छी तरह संचालित निजी स्कूलों में बच्चों को इस तरह के बहुत से मौके मिलते हैं। इससे उनमें आत्मविश्वास पैदा होता है और उन्हें ज्ञान भी प्राप्त होता है। इसलिए, हमने इस बात पर जोर दिया कि इस स्कूल के बच्चों को भी विविध प्रकार के अनुभव हों। हमने नाटक–कार्यशालाओं, नेतृत्व–शिविरों, सृजनात्मक कार्यशालाओं और बाह्य अनुभवों पर आधारित भ्रमण करवाने की योजना बनाई। जो कार्यशालाएँ तब शुरू की गई थीं, वे आज भी प्रारम्भिक दलों के छात्रों की सहायता से की जाती हैं। पास के एक ईंट–भट्टे के भ्रमण से शुरू हुए दौरे बाद में ऐतिहासिक महत्व के रोचक स्थानों तक फैल गए। शुरुआत एक छोटे से समूह से हुई, लेकिन जल्दी ही वह सब कक्षाओं के बच्चों के समूह के रूप में विकसित हो गया और इन दौरों पर सभी बच्चों के साथ उनके माता–पिता भी जाते थे, और इस तरह शिक्षकों की मदद भी होती थी।

हमारी एस.डी.एम.सी. के इतिहास में अगला चरण बहुत महत्वपूर्ण था। हम एस.डी.एम.सी. के माध्यम से लोगों और समुदाय के लिए कार्यक्रम आयोजित करने लगे। पहला कार्यक्रम वर्षा–जल के संग्रहण पर था। इस विषय के एक विशेषज्ञ श्री पाद्रे ने एक छोटा व्याख्यान और प्रदर्शन दिया। इससे लोगों में बहुत दिलचस्पी जगी और बाद में कई गतिविधियों का सिलसिला शुरू हुआ। हममें से कुछ ने अपने घर और अपनी जमीन में इन्हें अपनाया और इस प्रकार यह शुरुआत हुई। तीसरे साल तक हममें से अनेक परिवारों को इस क्षेत्र में बहुत अच्छी फसल मिलने लगी। आखिरकार, वाणी एस.डी.एम.सी. की अध्यक्ष हो गई और हमने स्कूल के कामों में बहुत लगन से भाग लेना जारी रखा। हमने बहुत से लोगों को बाल विकास, बच्चों का प्रभावी लालन–पालन, सीखने–सिखाने की प्रक्रिया और परिवार के भीतर संवाद के बारे में बोलने के लिए आमन्त्रित किया। इन निर्णयों के परिणामस्वरूप इन विषयों पर कार्यक्रम, शिविर और कार्यशालाएँ आयोजित करने में स्थानीय युवा समूह हमारे साथ जुड़ गए। दो भवन बन गए, गाँव में अपर्याप्त

> *यह लम्बा संघर्ष है। अपने गाँव के स्कूल में मेरे 25 साल के अनुभव से यह बहुत स्पष्ट हो गया है कि इस मामले में कोई त्वरित हल नहीं होता। किसी भी विकास कार्य की तरह इसमें समय और निरन्तर लगे रहने की आवश्यकता होती है। इसमें हमेशा उतार–चढ़ाव आते रहे हैं। हम अपने सपनों का स्कूल नहीं बना पाए हैं। हम अभी भी इस पर काम कर रहे हैं।*

सुविधाओं वाली आँगनवाड़ी को पूरी आधारभूत व्यवस्था के साथ स्कूल के प्रांगण में ले आया गया। स्कूल ने खेलों में बहुत अच्छा प्रदर्शन किया और ब्लॉक स्तर पर सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लिया। स्कूल ने एक पत्रिका प्रकाशित की जिसमें बच्चों ने विभिन्न विषयों पर लिखा। धीरे–धीरे स्कूल गाँव में गतिविधियों का केन्द्र बन गया। पर वाणी को अपना पद छोड़ना पड़ा क्योंकि हमारे बच्चों की स्कूली पढ़ाई पूरी हो गई थी और उन्हें हाईस्कूल शिक्षा के लिए गाँव से बाहर निकलना था।

हमारे बच्चों ने बैंगलुरू के सैन्टर फॉर लर्निंग (सी.एफ.एल.) में प्रवेश लिया। यहाँ एक बहुत अच्छा विकसित पालक–शिक्षक समूह था जिसकी बिना नागा हर माह बैठक होती थी, और विभिन्न विषयों पर चर्चा होती थी। ये विषय केवल शिक्षा तक ही सीमित नहीं होते थे बल्कि उनमें जीवन के व्यापक प्रश्न भी शामिल रहते थे। ये चर्चाएँ बहुत ज्ञानवर्धक और चुनौतीपूर्ण होती थीं। हम इन बैठकों में ज्यादातर समय चुप रहकर सुनते थे और बाद में उन पर काफी चिन्तन करते थे। मेरे गाँव के पालकों के विपरीत यहाँ के पालक बहुत समर्थ और सक्षम थे; वे न केवल विभिन्न स्तरों पर स्कूल की मदद करते थे, बल्कि स्कूल के अकादमिक और शैक्षणिक पहलुओं पर अपनी राय भी दे सकते थे। सी.एफ.एल. का मेरा एक अनुभव कुछ वर्ष पहले आयोजित राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार में भागीदारी का अनुभव था। इस सेमिनार में हमने उत्तर–पूर्वी कर्नाटक के सरकारी प्राथमिक स्कूलों के 13 शिक्षकों को आमन्त्रित किया था। मैं उनके लिए चर्चाओं का अनुवाद करते हुए और उनके सुख–आराम का ध्यान रखते हुए निरन्तर उनके साथ रहा। दिन की प्रस्तुतियों पर छिड़ी बहस पर हम रात में आगे चर्चा करते थे।

मैं कहूँगा कि स्कूल एस.डी.एम.सी. में मेरी भागीदारी ने मुझे निश्चित रूप से शिक्षक–पालक सम्बन्ध की गतिशीलता को समझने और उस पर काम करने में मेरी मदद की है।

यह प्रेम और चिढ़ का सम्बन्ध है: शिक्षक और पालक के सम्बन्ध में प्रेम और चिढ़, दोनों का भाव होता है। इन दो समूहों के बीच में एक प्रकार का अविश्वास होता है। मुझे अपने गाँव के स्कूल, सी.एफ.एल., और सुरपुर ब्लॉक के सी.एफ.एस.आई. (चाइल्ड फ्रैन्डली स्कूल इनिशियेटिव – बच्चों के लिए मैत्रीपूर्ण स्कूल प्रयास) के स्कूलों में से, जहाँ मैं काम करता हूँ, एक–सा धागा गुजरता हुआ दिखाई देता है। मेरे गाँव के स्कूल में शिक्षकों और पालकों के बीच का रिश्ता बड़ा रूखा और सीधा–सपाट था; सी.एफ.एल. में यह बहुत परिष्कृत और बारीक है; सुरपुर ब्लॉक में यह समाज के दो हिस्सों – अपढ़ गरीबों और शिक्षित शक्तिशाली लोगों – के बीच के तनाव जैसा प्रतीत होता है। मुझे लगता है कि ग्रामीण गरीबों के लिए स्कूल हमेशा एक बाहरी संस्था रही है जो उनकी एकरस दिनचर्या और जीविका के रास्ते में अड़चन की तरह आती है। इसलिए, गरीब पालक कभी स्कूल के लिए अपनेपन और स्वामित्व का भाव अनुभव नहीं कर पाते और उसकी गतिविधियों में पूरे दिल से भाग नहीं ले पाते। उनके बीच का अविश्वास एक या दो बैठकों से दूर नहीं किया जा सकता। इस संशय को केवल सचेतन रूप से निरन्तर प्रयास करके ही कम किया जा सकता है। किसी साझा या बड़े लक्ष्य के लिए मिलकर काम करना ही सफल होने की एकमात्र सुनिश्चित पद्धति है। मुझे अपने गाँव में कुछ सफलता मिली। सुरपुर स्कूल में लगने वाले मेलों ने बहुत सफलतापूर्वक बड़े पैमाने पर इन दोनों समुदायों को निकट लाने का कार्य किया। दोनों समुदायों ने अपना ध्यान बच्चों के सीखने और स्कूल की उपलब्धियों को प्रदर्शित करने पर केन्द्रित किया। मेरे लिए यह रिश्ता तब पूर्णता पर पहुँचा जब मेरे गाँव के स्कूल में एक विज्ञान और गणित मेला लगा जिसमें आसपास के चार स्कूलों ने भाग लिया।

शिक्षक नहीं चाहते कि आप उन्हें यह बताएँ कि कैसे पढ़ाना चाहिए: इन तीनों प्रकार के स्कूलों में मैंने यह बात पाई। शिक्षकों को लगता है कि यह उनका अधिकार क्षेत्र है; उन्हें अपने काम को एकाग्रचित्त होकर करने की जरूरत है और इस सिलसिले में कोई भी अन्य बात बेकार की बाधा होती है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें मैंने अपने गाँव के स्कूल, सी.एफ.एल. और सुरपुर ब्लॉक में कुछ भी नया होते हुए नहीं देखा।

साथ–साथ योजना बनाने से हम साथ–साथ काम करने की ओर बढ़ते हैं: इसलिए सबसे बड़ी रुकावट योजना बनाने के स्तर पर होती है। यह एक ऐसा क्षेत्र था जिसमें हम अपने गाँव के स्कूल में ज्यादा कुछ नहीं कर सके। हम हर साल जून के महीने में योजना बनाने का प्रयास करते थे और शिक्षक उसे हमेशा असफल कर देते थे। वाणी के एस.डी.एम.सी. की अध्यक्ष होने के बावजूद वे ऐसा करने में कामयाब हो जाते थे। इस एक क्षेत्र में गाँव की एस.डी.एम.

सी. के रूप में हम पूरी तरह असफल रहे। इसे एक सार्थक प्रक्रिया बनाने के लिए एक संगठित प्रयास की आवश्यकता है जिसमें विभागीय अधिकारियों और पालक समूह के नेताओं की सक्रिय भागीदारी हो।

सामूहिक नेतृत्व बेहद जरूरी है: इन संस्थाओं के लिए प्रतिनिधियों का होना ही नहीं बल्कि सामूहिक नेतृत्व का होना सबसे जरूरी शर्त है। आज मेरे गाँव में एस.डी.एम.सी. काफी सक्रिय है। उन्होंने इस साल विज्ञान और गणित मेले में पूरे मन से सहयोग किया। वे छुट्टियों में बच्चों की कार्यशालाएँ आयोजित करना जारी रखना चाहते हैं। यह सम्भव हो सका क्योंकि समुदाय का बड़ा भाग इसकी माँग करता है। शुरुआती दिनों में हमें अलग–अलग पालकों को यह समझाने में बहुत समय लगाना पड़ता था कि उन्हें स्कूल की गतिविधियों में क्यों भाग लेना चाहिए। बाद में किसानों के लिए कार्यक्रमों से लेकर स्वास्थ्य और व्यक्तित्व विकास कार्यक्रमों तक विभिन्न प्रकार की गतिविधियों के आयोजन हुए। उनमें सभी प्रकार के लोगों को भाग लेने का और इस तरह अपने स्वयं के विकास की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने का अवसर मिला। इसके परिणामस्वरूप अनेक लोगों और नेताओं में नेतृत्व के गुण पैदा हुए।

यह लम्बा संघर्ष है: अपने गाँव के स्कूल में मेरे 25 साल के अनुभव से यह बहुत स्पष्ट हो गया है कि इस मामले में कोई त्वरित् हल नहीं होता। किसी भी विकास कार्य की तरह इसमें समय और निरन्तर लगे रहने की आवश्यकता होती है। इसमें हमेशा उतार–चढ़ाव आते रहे हैं। हम अपने सपनों का स्कूल नहीं बना पाए हैं। हम अभी भी इस पर काम कर रहे हैं।

कृपया राजनीति को दूर रखें! तटस्थता का यह पूरा मामला मेरी समझ में नहीं आता। यह राजनीति ही है। शिक्षितों और धनवानों की राजनीति। यही कारण है कि एस.डी.एम.सी. के सशक्तीकरण के इस पूरे प्रयास का इतना विरोध है, उसे नकारा जाता है, और उसके प्रति अनिच्छा है। इसलिए इस भूमिका के लिए लोगों का समर्थ बनाया जाना बहुत जरूरी है। उन्हें अपनी आवाज उठाने की और जो वे चाहते हैं उसकी माँग करने की ताकत दी जाना चाहिए। इसलिए, एस.डी.एम.सी. के साथ काम करने में एक स्पष्ट राजनीतिक उद्देश्य है – निःशक्त लोगों को शक्तिशाली बनाना – गरीबों की राजनीति।

एक–दूसरे का सम्मान करना सफलता की कुंजी है: हमने पाया कि यह असली कारक था। पर हमने यह कई विफलताओं के बाद सीखा। इस प्रक्रिया में हमने अपने अनेक मित्र खो दिए और कुछ शत्रु भी बनाए। लेकिन अन्ततः स्कूल में हमारे काम ने हमें यह सिखाया कि किसी भी आन्दोलन में जिन लोगों के साथ आप काम करते हैं, उनका सम्मान करना बेहद जरूरी है। मुझे लगता है कि यह किसी भी लोकतान्त्रिक प्रक्रिया का आधार है। एकबारगी जब लोग दूसरों की बात सुनने, उस पर विचार करने, दूसरों का सम्मान करने और उन्हें महत्व देने के लिए राजी हो जाते हैं तो नए मूल्यों का एक ताना–बाना निर्मित हो जाता है। एक बार मूल्यों का यह ढाँचा स्थापित हो जाए तो फिर दल या समूह का कार्य ज्यादा आसान, अर्थपूर्ण और उत्पादक हो जाता है।

उमाशंकर पेरियोडी अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के चाइल्ड–फ्रेण्डली स्कूल इनिशिएटिव के प्रमुख हैं। उन्हें विकास के क्षेत्र में 25 वर्षों से भी अधिक का अनुभव है। उन्होंने राष्ट्रीय साक्षरता मिशन में, तथा कर्नाटक के बीआर हिल्स क्षेत्र में आदिवासी शिक्षा में व्यापक रूप से योगदान दिया है। वे कर्नाटक स्टेट ट्रेनर्स कलेक्टिव के अध्यक्ष भी हैं। उनसे periodi@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।